Chapter-7

सप्तम अध्याय

साहित्यकार संसद भवन की एक मुलाकात एवं महादेवी के संदर्भ में साहित्यकारों का साक्षात्कार

सप्तम अध्याय

साहित्यकार संसद भवन की एक मुलाकात एवं महादेवी के संदर्भ में साहित्यकारों का साक्षात्कार

इस सप्तम अध्याय में मैंने महादेवी जी के सन्दर्भ में लिये साक्षात्कार को रखा है। एवं अन्य साहित्यकारों के साक्षात्कार महादेवी के संदर्भ में पुस्तक एवं पत्रिका के माध्यम से शोध किया।

महादेवी जी के बारे में कुछ अधिक जानने की जिज्ञासा मुझे इलाहाबाद ले गई। महादेवी जी के 'साहित्यकार संसद भवन' की मुलाकात ली साहित्यकार संसद भवन के वर्तमान समय के प्रधानमंत्री श्री प्रद्युम्ननाथ तिवारी (करुणेश) जी का साक्षात्कार लिया महादेवी जी के सन्दर्भ में करुणेश जी से मुझे महादेवी जी के बारे में प्रत्यक्ष जानकारी मिली। अति व्यस्त श्रेष्ठ गीतकार श्री प्रद्युम्ननाथ तिवारी जी ने अपना साक्षात्कार देकर मेरा हौसला बढ़ाया इतना ही नहीं मेरे कार्य को सरल बनाकर उसे गुरुता प्रदान की, उनके उष्मा भरे दायित्व पूर्ण व्यवहार के कारण ही मैं इस अध्याय को संक्षेप में प्रारंभ कर उसके चरम सीमा तक पहुँच सकी हूँ।

साहित्यकार संसद भवन इलाहाबाद की एक मुलाकात

श्री प्रद्युम्ननाथ तिवारी 'करुणेश' जी से वार्तालाप करते समय जानकारी उन्होंने दी। गंगा–यमुना एवं अन्तःसलिला की पवित्र धाराओं से श्री मण्डित प्रयाग, भारतीय संस्कृति के उषाकाल से ही विविध प्रेरणाओं का अक्षय स्त्रोत रहा है। तीर्थराज की गरिमा से विभूषित तथा देवनदियों की संगमस्थली इस प्रयाग को समय–समय पर तपःपूत ऋषियों–महर्षियों, संतों, राजर्षियों एवं विविध धर्म–सम्प्रदाय के प्रचारकों ने अलंकृत किया है।

महर्षि भारद्वाज का आश्रम प्रयाग का प्रमुख आकर्षण रहा। याज्ञवल्क्य एवं भारद्वाज के संवाद माध्यम से रामकथा की पावन स्त्रोतस्विनी प्रयाग से ही बही। मर्यादा पुरुषोत्तम राम एवं जगजननी सीता ने त्रिवेणी–स्नान से स्वयं को धन्य किया। मीमांसकशिरोमणि आचार्य कुमारिल भट्ट, आदि शंकराचार्य, महाप्रभु गौराङ्ग, स्वामी वल्लभाचार्य, स्वामी निम्बार्काचार्य तथा सन्त मलूकदास ने यथावसर प्रयागवास कर अपना जीवन सार्थक बनाया।

SMT. HANSA MEHTA LIBRARY
M. S. University of Baroda

स्वतन्त्रता–संग्राम के दिनों में भी इलाहाबाद राष्ट्रीय–चेतना का केन्द्र बिन्दु बना रहा। साथ ही राजनीति के साथ ही स्वाधीनता–संग्राम की अवधि में, साहित्य एवं संस्कृति की भी समानान्तर धारा प्रयाग में विकसित होती रही।

हिन्दी कविता के छायावादी आन्दोलन के चार प्रमुख कर्णधारों में एक श्री जयशंकर प्रसाद जी (वाराणसी को छोड़) शेष तीन इलाहाबाद में ही आजीवन रहे। महाप्राण पं. सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' पं. सुमित्रानन्दन पन्त एवं महीयसी महादेवी वर्मा ने इसी नगर की सोंधी माटी में अपनी काव्य–साधना सम्पन्न की तथा विश्वव्यापी यश प्राप्त किया।

साहित्यकार – संसद की स्थापना एवं उद्देश्य

आधुनिक युग की मीरा कही जाने वाली, विरह के पंथ में 'इति एवं अथ' को नकारने वाली, नीरभरी दुःख की बदली के रूप में स्वयं को अभिव्यक्त करने वाली महीयसी महादेवी वर्मा का साहित्यिक–जीवन परम श्रद्धेय एवं वन्दनीय रहा है। एक ओर जहाँ उन्हें राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी से जनकोचित वात्सल्य प्राप्त था, वहीं लोकनायक पं. जवाहरलाल नेहरू तथा डॉ. राजेन्द्रप्रसाद जी उनके राखीबन्द सहोदर भाई थे। महाप्राण निराला की तो वह सच्चे अर्थों में संरक्षिका एवं योग–क्षेमवाहिका थीं। पुरुष प्रधान समाज में उपेक्षाओं, प्रत्यवायों, दुष्प्रचारों तथा स्वार्थोन्मुख झन्झाओं के अनन्त चक्रव्यूह को भेदकर जिस साहस, निष्ठा, स्वाभिमान एवं दृढ़ता के साथ महादेवी जी ने उत्कृष्ट, अप्रतिम एवं असाधारण साहित्य–साधना की वह अपने आप में एक अध्येय इतिहास है।

वस्तुतः महादेवी जी स्वयुगीन हिन्दी कर्णधारों की समन्वित चेतना का प्रतीक थीं। उन्हें राष्ट्रकवि श्री मैथिलीशरण गुप्त, पं. माखनलाल चतुर्वेदी, महाप्राण 'निराला', पं. सुमित्रानन्दन पन्त, श्री रामधारी सिंह दिनकर, सियाराम शरण गुप्त आदि सभी साहित्यकारों की यथोचित अनुकम्पा प्राप्त थी। इस अनुकम्पा में श्रद्धा, स्नेह, आदर, निष्ठा, आत्मीयता, बन्धुत्व, वात्सल्य सबके सब समरस थे। महादेवी जी किसी की परम श्रद्धेय थीं तो किसी की स्नेहपात्री। किसी के लिए आत्मीय बन्धु जैसी थीं तो किसी के लिए प्रेरणा का अक्षय स्त्रोत।

सम्भवतः साहित्य–जगत से प्राप्त इसी समवेत उष्मा ने महीयसी महादेवी जी के कोमल अन्तःकरण में एक युगजीवी साहित्य संस्था की स्थापना का संकल्प अंकुरित

किया। वही संस्था है साहित्यकार संसद। महादेवी जी की हार्दिक आकांक्षा थी कि प्रयाग की पावन भूमि में एक ऐसा साहित्यमन्दिर स्थापित हो जो साहित्यकारों के लिए 'आत्मीय विश्राम गृह' एवं 'सर्जनात्मक प्रेरणा भूमि' जैसा हो, जो उत्कृष्ट साहित्य–साधना का सिद्धपीठ हो।

निःस्वार्थभाव से लोकोपकार के निमित्त लिए गए संकल्प निश्चित रूप से परिपूर्ण होते हैं। महीयसी महादेवी जी का भी मंगलमय सारस्वत–स्वप्न एकदिन साकार हो उठा। इलाहाबाद नगर के उत्तरांचल में, पावन गंगातट पर बसे रसूलाबाद में एक भवन, परिसर–भूमि के साथ चालीस हजार रुपये में वर्ष 1946 में क्रय किया गया और इसी भवन में 'साहित्यकार संसद' की विधिवत स्थापना की गई। उस समय, इस संस्था का संघटनात्मक स्वरूप इस प्रकार था।

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त, (अध्यक्ष), पं. माखनलाल चतुर्वेदी, (उपाध्यक्ष) महादेवी वर्मा (प्रधानमंत्री), श्री रामकृष्णदास, (कोषाध्यक्ष) हजारी प्रसाद द्विवेदी, (सहायक मंत्री) तथा सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, इलाचन्द्र जोशी, सियारामशरण गुप्त, गुलाबराय, भदन्त आनन्द कौशल्यापन कार्यकारिणी के सदस्य थे।

संस्था के उद्देश्य

'साहित्यकार संसद', साहित्य सर्जना, साहित्यनिष्ठा, साहित्यसेवा एवं वाद मुक्त रचनाधर्मिता को समर्पित संस्था के रूप में प्रतिष्ठित हुई थी। इसके कुछ प्रमुख उद्देश्य इस प्रकार थे–

1. हिन्दी साहित्य के साहित्यकारों पुरुषों तथा महिलाओं में सक्रिय सहयोग स्थापित करना, उनमें आपसी सहानुभूति उत्पन्न करना और उनकी साहित्यिक प्रतिभा को उचित ढंग से उपभोग करने के लिए पृष्ठभूमि तथा अनुकूल वातावरण उत्पन्न करना।
2. उन साहित्यकारों के लिए जो किन्हीं कारणों से साहित्य के क्षेत्र में योगदान करने में अक्षम हो गये हैं, उनके लिए एक निधि सृजन करना, तथा उस निधि से उनको उनकी अक्षम की अवधि के लिए सहायता प्रदान करना।
3. लेखकों के अधिकारों की हर सम्भव प्रयास से रक्षा करना।
4. लेखकों की आवर्ती आय सुरक्षित करने तथा लेखक सहायता निधि निर्माण करने में हितकारी साहित्य मुद्रण करना।
5. एक अच्छे पुस्तकालय 'साहित्यकला' तथा 'साहित्य केन्द्र' स्थापित करना जहाँ कलाकार तथा साहित्यकार निवास कर सकें, और शान्त वातावरण में रचनात्मक कार्य कर सकें।

6. एक साहित्यिक समाचार पत्र 'साहित्यकार' का मुद्रण।

7. इलाहाबाद या इलाहाबाद के बाहर समान लक्ष्यधर्मों ऐसी अन्य संस्थाओं को प्रारम्भ करना, सम्पोषित करना और सहायता देना तथा इस लक्ष्य हेतु किसी अन्य समिति या संस्था निर्गत करना।

8. ऐसे अन्य सभी साधन अपनाना जो उपर्युक्त लक्ष्य प्राप्त करने के लिए प्रासंगिक या सहायक हों।

उद्देश्य पूर्ति

1945 ई. में स्थापित 'साहित्याकार संसद' कई वर्ष तक महीयसी महादेवी जी के संयोजन एवं देख-रेख में अपने उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति करती रही। संसद भवन में अनेक युग निर्माता राष्ट्रभाषा-व्यक्तित्व समय-समय पर आते रहे तथा अनेक महनीय साहित्यिक अनुष्ठान एवं उपक्रम इस संस्था के तत्वावधान में सम्पन्न होते रहे।

परन्तु पिछली बीसवीं शताब्दी के छठे दशक की समाप्ति के बाद संसद की गतिविधियाँ भी क्षीण से क्षीणतर होती गयीं। इसका मूल कारण था संस्था के संरक्षकों का क्रमशः विछोह तथा महादेवी जी की साहित्यिक व्यस्तताओं के कारण प्रभूत समय का अभाव। महिला विद्यापीठ प्रयाग का प्रधानाचार्य पद एवं विद्यालय बहुविधि दायित्व तथा अहर्निश साहित्यानुष्ठानों से जुड़ी यात्रायें, निष्ठावान सहायकों का आभाव ये थे कुछ कारण जिनके चलते संस्था निष्प्राण होती गई। नवें दशक (1986-87) के मध्य तक संस्था का नाम मात्र ही शेष रह गया। महादेवी जी स्वयं को निरुपाय देख व्यथामग्न रहा करती थीं। उनका संकल्पतरु निष्ठा-जल के अभाव में शुष्कप्राय हो रहा था। श्री प्रद्युम्ननाथ तिवारी 'करुणेश' के अथक प्रयास से 'साहित्यकार संसद' के पुराने पंजीकरण का नवीनीकरण सम्पन्न हुआ। प्रादेशिक शासन की आर्थिक सहायता से जीर्ण-शीर्ण संसद-भवन का भी सम्यक रूप से पुनर्निर्माण हुआ।

साहित्यकार संसद भवन का चित्र

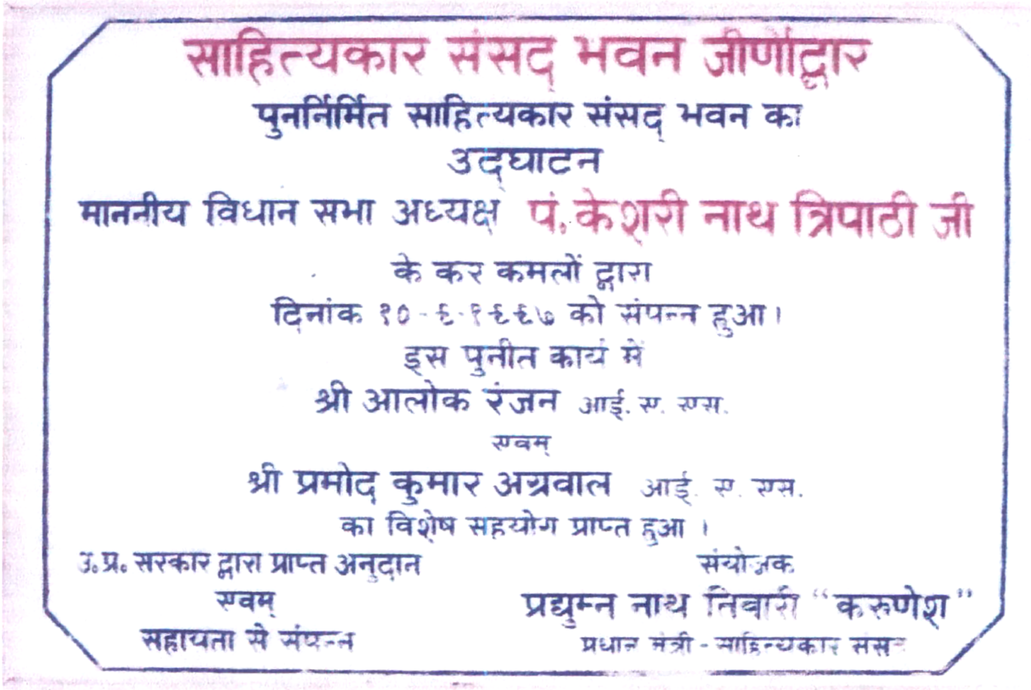

साहित्यकार संसद भवन का जीर्णोद्धार

साहित्यकार संसद भवन के वर्तमान समय के प्रधानमंत्री
श्री प्रद्युम्ननाथ तिवारी (करुणेश) जी का वर्तमान चित्र

श्री प्रद्युम्ननाथ तिवारी (करुणेश) जी का साक्षात्कार (महादेवी के संदर्भ में)

महादेवी जी से आप सर्वप्रथम कब मिले थे ?

महादेवी जी से मैं प्रथम बार दिसम्बर 1986 में मिला था।

महादेवी जी से मिलने का क्या कोई कारण था ?

हॉ ! कारण यह था कि मेरी काव्य कृति अन्त सलिला का प्रकाशन होना था जिसकी भूमिका महादेवी से लिखाने की मेरी प्रबल इच्छा थी।

क्या महादेवी जी आप से मिली और आपकी कृति अन्तः सलिला की भूमिका उन्होंने लिखी ?

हाँ, महादेवी जी मुझसे मिली और अन्तःसलिला मेरी कृति जो सन् 2000 में प्रकाशित हुई उसकी भूमिका भी उन्होंने लिखी।

महादेवी से मिलने पर आपको कैसा लगा ? और उनका प्रथम भाव आपके प्रति कैसा रहा ?

महादेवी जी से मुझे मिलने पर बहुत अच्छा लगा। उनका प्रथम भाव मेरे प्रति पुत्र वत् रहा जिसे बाद में उन्होंने ने साकार भी किया।

महादेवी जी ने आप में क्या देखा जिससे आपको पुत्रवत् स्नेह प्रदान किया ?

जब मैं महादेवी जी के कमरे में पहुँचा तो थोड़ी दूर बैठ गया उन्होंने मेरा नाम पूछा मैंने अपना नाम 'करुणेश' बताया उन्होंने कहा कविता लिखते हों, गीत लिखते हो मैंने कहा, 'हाँ'। उन्होंने कहा, 'गीत सुनाओ'। मुझे उन्होंने अपने समीप बैठा लिया मैंने निरन्तर दस गीत सुनाए, सुनकर वे विह्वल हो गई और मुझसे कहा अच्छा लिखते हो। उनका यह मातृत्व स्नेह पाकर मैं फफक-फफक कर रोने लगा। उन्होंने कहा, 'बड़े भावुक होकर तुमने 'करुणेश' नाम को सार्थक किया है। जब तुम्हारी इच्छा हुआ करे मेरे पास आ जाना समय का कोई बन्धन नहीं।'

महादेवी जी के जीवन की कोई अच्छी घटना जो आपको बताई हो, याद हो तो बताएं?

हाँ! इन्दौर में महादेवी जी को जब 'मंगला प्रसाद' पारितोषिक पुरस्कार प्राप्त हुआ। उस समय की एक अच्छी घटना देवी जी ने मुझसे सुनाई थी – जब मैंने पुरस्कार प्राप्त किया उस समय वहाँ निराला जी और पन्त जी दोनों थे, दोनों ने आकर मुझे गले लगाकर बधाइयाँ दी दोनों साहित्यकार मुझसे बड़े थे परन्तु उनका स्नेह, आत्मियता ऐसी थी कि इन्हें मुझे पुरस्कृत देखकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई जबकि आज के साहित्यकारों में ऐसे उदार भावों का अभाव है।

महादेवी जी के जीवन में घटित दुःखद प्रसंग जो उन्होंने आपको बताया हो तो बताएँ।

वैसे तो महादेवी जी एक समाज सेविका भी थी उनके जीवन में अनेकों घटना घटित हुई जो दुःखदायी रही है। मैं उनके व्यक्तित्व से जुड़ी घटना को बताऊँगा जो उन्होंने मुझे बताई थी। महादेवी जी ने स्नातक की शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् बौद्ध भिक्षुणी बनने की इच्छा प्रगट की उसके लिए वे उत्तरांचल गई, वहाँ एक बौद्ध संत से मिली, वहाँ पर उन्होंने ने देखा बौद्ध संत के सामने दो बौद्ध भिक्षुक शिष्य बड़ा-सा पंखा हाथ से हिलाने वाला पकड़े हुए है, महादेवी जी ने जब शिष्यों से पूछा ऐसा क्यूं? तो एक भिक्षुक शिष्य ने उत्तर दिया कि वे स्त्रियों को नहीं देखते, बस! इतना सुनते ही महादेवी जी का मन उदास हो गया और कहाँ कि जिस संत में इतना भी संयम नहीं है कि वह स्त्रियों को देख कर संयमित रह सके वह मुझे शिक्षा क्या दे सकेंगा वे वहाँ से चली आई।

महादेवी जी की सामाजिक चेतना एवं उनकी संवेदनाओं के बारे में में कुछ बताएँ?

महादेवी जी के गद्य साहित्य में सामाजिक चेतना पग-पग पर मिलता है। लेकिन मैं उनके गद्य साहित्य से हटकर बात कहना चाहूँगा। महादेवी जी चेतना से युक्त नारी थी, इसी वजह से वे नारी के प्रति अत्यन्त संवेदनशील थी। दहेजप्रथा को लेकर एक बार उन्होंने मुझसे इतना तक कहा कि यहॉ का पुरुष रावण है और सीता जैसी नारी का अपहरण करने में जरा सा भी संकोच नहीं करता। उसे प्रताड़ित करने में सुख का अनुभव होता है। आज का यह दहेज का दानव न जाने कितनी युवतियों को अपना ग्रास बना चुका है। पुरुषों में जैसे मानवता नाम की कोई चीज ही नहीं रह गई, लड़के का पिता यह भूल जाता है कि मेरी भी कोई बेटी है दूसरे की बेटी के साथ दुर्व्यवहार करने में वह यह नहीं सोचता कि मेरी बेटी के साथ भी ऐसा हो सकता है। महादेवी जी के इस शब्द पर की हर पुरुष रावण है मैंने साहस करते हुए यह कहा कि माँ जी आप का कथन सत्य अवश्य है किन्तू पूर्णतः नहीं। मेरा भी अपना अनुभव है, मैंने ऐसी भी कन्याओं को देखा है जो विवाह के बाद ससुराल जाने पर अपने सास-ससुर तथा बड़ो के सामने ऐसा कहती है जो संस्कारों के अनुरूप नहीं है। मैंने ऐसा कहते हुए सुना कि मैं घर का रसोई का काम या चूल्हा बर्तन करने के लिए नहीं आई मेरे पिताने इसलिए दहेज नहीं दिया। कुछ आधुनिक सोच की लड़कियों की माताएं यह चाहती हैं कि मेरी लड़की ऐसे घर में जाये जहाँ लड़का अकेला रहता हों, माँ-बाप, भाई, बहन उसके साथ न रहते हो। ऐसी माताएँ अपनी पुत्री के वैवाहिक जीवन में हस्तक्षेप करने से बाज नहीं आती। पुत्री तथा दामाद को अपने ढंग से जीवन व्यतीत कराना चाहती

हैं, यह सब ऐसे कारण हैं जो पति–पत्नी के संबंधों में दरार लाते हैं। यद्यपि मेरी इन बातों को स्वीकार नहीं किया इसके पीछे महादेवी जी का व्यक्तिगत जीवन भी था, जो उनके मन में पुरुषों के प्रति क्रांतिकारी भाव पैदा हुए। मैंने महादेवीजी की बातों से कोई खेद प्रगट नहीं किया बल्कि मैं उनकी बातों से सहमत हुआ आज भी दहेज समस्या उतनी ही तीव्र है जितनी पहले थी। महादेवी जी मेरे लिए माता समान थीं, तो साथ ही सरस्वती का रूप भी उनकी साधारण वार्त में भी लगता था जैसे वे वेद की ऋचाएँ बोल रही हो, उनका एक–एक शब्द बड़ा ही नपा–तुला होता था। यह कहना बहुत कठिन है कि उनका गद्य श्रेष्ठ था या पद्य या वक्तव्य तीनों में वे पारंगत थीं।

महादेवी जी की वैयक्तिक संवेदनाएँ कैसी थीं ?

महादेवी जी एक साहित्यकार हैं और एक सच्चे साहित्यकार में संवेदनशीलता होती ही है तभी तो वो समाज के सामने यथार्थ के धरातल पर अपने साहित्य को ला खड़ा करता है। फिर भी मैं उनके साहित्य से हटकर उनके व्यक्तिगत सम्बन्धों में उनकी वैयक्तिक संवेदना को स्पष्ट करना चाहूँगा। महादेवी जी समाज के साथ–साथ व्यक्तिगत सम्बन्धों के प्रति भी संवेदनशील थी। एक संस्मरण याद आता है स्वर्गीय विश्वम्भरनाथ पाण्डे भूतपूर्व गर्वनर से उनके बहुत ही आत्मीय संबंध थे। उनकी सुपुत्री नन्दिनी उन्हें बुआजी कहती थी। विवाह निश्चित होने पर नन्दिनी ने कहा कि बुआजी मेरे विवाह में सप्तपदी आप ही पढ़ेंगी तभी मैं विवाह करूँगी। महादेवी जी उस बालिका के अनुरोध को ठुकराने का साहस कैसे करती ? क्योंकि उनकी भावनाओं में उनके वैदिक सिद्धांत तथा संस्कार थे जो उन्हें उनके माता–पिता से प्राप्त थे।

महादेवी जी ने नन्दिनी से कहा ठीक है मैं तुम दोनों वर–वधू को सप्तपदी पढ़ा दूँगी, याद करा दूँगी और तुम दोनों सप्तपदी स्वयं पढ़ना और उसका अपने वैवाहिक जीवन में निर्वाह करना।

महादेवी जी ने नन्दिनी तथा उसके पति को हृदय से आशीर्वाद दिया और विवाह सम्पन्न हुआ। इसके बाद मुझे एक संस्मरण याद है। जब मैत्रेयी के प्रवेशांङ्क का विमोचन हो रहा था।

6 जुलाई 1987 को मैत्रेयी के प्रवेशाङ्क का विमोचन करते समय भी वह अत्यधिक भावुक हो उठी थीं। 300 रु. की धनराशि देकर उन्होंने मैत्रेयी की आजन्म सदस्यता भी स्वीकार की थी। उनका स्नेह प्यार, वात्सल्य मेरे रक्त के अणु–अणु में घुल गया था।

मैत्रेयी पत्रिका के विमोचन के अवसर पर 6 जुलाई 1987 को महादेवी जी के निवास पर लिया गया चित्र बाँए से प्रोफेसर डॉ. मोहन अवस्थी, प्रोफेसर डॉ. जगदीश गुप्त, महादेवी वर्मा जी तथा पत्रिका के सम्पादक प्रद्युम्ननाथ तिवारी 'करुणेश' जी एवं अन्य साहित्य प्रेमी।

मैत्रेयी पत्रिका के विमोचन पर महादेवी के निवास पर महादेवी जी से वार्ता करते हुए पत्रिका के सम्पादक श्री प्रद्युम्ननाथ तिवारी 'करुणेश' एवं श्रेष्ठ उपन्यासकार श्री कैलाश कल्पित।

मैत्रेयी का विमोचन करते हुए महादेवी वर्मा तथा करुणेश जी।

करुणेश जी कह रहे हैं (खड़े होकर) – इस विनम्र अभ्यर्थना के साथ मैत्रेयी–कलश में संकलित वाङ्मय पत्र–पुष्प, अनन्त शून्याकाश में विलीन परन्तु अमरत्व वरण करने वाली महीयसी महादेवी जी के पावन श्री चरणों में अर्पित करता हूँ।

साहित्य संसद भवन की देख-रेख श्रेष्ठ गीतकार श्री प्रद्युम्ननाथ तिवारी (करुणेश) जी कर रहे हैं। जब से करुणेश जी इस संस्था के प्रधानमंत्री के रूप में कार्यभार सम्भाल रहे हैं,तब से हर वर्ष 24 मार्च महादेवी जी की जन्म तिथि तथा 11 सितम्बर महादेवी जी की पुण्य तिथि पर राष्ट्रीयस्तर के साहित्यिक आयोजन किये जाते हैं।

महादेवी जी की 7वीं पुण्य तिथि के अवसर पर आयोजित विचार गोष्ठी में साहित्यकार संसद भवन में महादेवी जी के चित्र के नीचे दार्शनिक चित्रकार इतिहासकार एवं विश्वविद्यालय के कुलपति श्री गोविन्दचन्द पाण्डेय। वक्ता के रूप में श्री प्रद्युम्ननाथ तिवारी- ''आज वह शरीर से मेरे साथ नहीं हैं, परन्तु उनका अनुभव-संवेद्य सूक्ष्म मार्ग-दर्शन मुझे निरन्तर मिल रहा है। इसकी विचित्र अनुभूति मुझे हो रही है। शायद मैं भावुकता के आवेश में सीमा से अधिक कह गया। परन्तु यह मेरी विवशता थी। वह मेरे लिए एक साहित्य-साधिका ही नहीं थी, वात्सल्यमयी माँ भी थी।''

महादेवी जी की 15वीं पुण्यतिथि के अवसर पर साहित्यकार संसद भवन में आयोजित विचार गोष्ठी में बाएँ से प्रथम मंच पर प्रोफेसर डॉ. टी.एन. राय बोम्बे संस्था के अध्यक्ष, डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी तथा संस्था के प्रधानमंत्री 'करुणेश' जी एवं अन्य साहित्य प्रेमी।

महीयसी महादेवी वर्मा की 16वीं पुण्यतिथि के अवसर पर साहित्यकार संसद के तत्वावधान में आयोजित कार्यक्रम में बाएँ से प्रथम पं. महेशनारायण शुक्ल, पू. मुख्य न्यायाधीश उच्च न्यायालय इलाहाबाद, श्री विष्णुकान्त शास्त्री, राज्यपाल उ.प्र., प्रेमशंकर गुप्त पूर्व न्यायाधीश इलाहाबाद उच्च न्यायाल एवं साहित्यकार संसद के प्रधानमंत्री प्रद्युम्ननाथ तिवारी करुणेश जी।

महीयसी महादेवी जी स्वयं रागिनी बन गईं। पन्नालाल गुप्त मानस लिखते हैं – महादेवी जी जब अपना साक्षात्कार देती थीं उस समय उनही जिव्हा पर सरस्वती विराजमान रहती थीं। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर वे इस प्रकार देतीं थीं मानो उत्तर देने से पूर्व उन्होंने तैयारी कर रखी हो और शब्द विन्यास को सँजा–सँजोकर रख रही हों। एक बार डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी ने जब उनसे प्रश्न किया –

प्रश्न **छायावाद के कवि चतुष्टय की बार–बार चर्चा है और ये हमारा सौभाग्य है कि उस चतुष्ट्य में से आप हमारे बीच में हैं, तो ये एक स्वाभाविक प्रश्न हमारे मन में आता है कि पूरे छायावाद का लेखा–जोखा कर सकने की स्थिति में आप हैं। आपकी दृष्टि में छायावादी युग की क्या उपलब्धियाँ होती हैं ?**

उत्तर देखिए, छायावाद में लिखने वाले, रहने वाले, जीने वाले ये मूल्यांकन नहीं कर पायेंगे, करना भी नहीं चाहिए। आँख से हम सब कुछ देखते तो हैं पर आँख से मिलाकर तो वस्तु नहीं देखते, आँख को तो नहीं देखते हैं। इसलिये ये कहना मेरे लिए तो कठिन है, लेकिन मैं समझती हूँ कि छायावाद न आता, तो बृजभाषा से खड़ी बोली हार जाती जो मार्दक, जो लालित्य, जो माधुर्य है वह और फिर भक्तिकाल के अन्तर्गत की तीव्र भावना को कौन लाता। छायावाद ही लाया। तो कोश उठाकर आप देखिए, कितने शब्द बनाए हैं, कितने शब्द माँगे हैं हमने। हर शब्द को तपाया है हमने अपनी अनुभूति में उसे ढाला है। इसी प्रकार जब अज्ञेय ने महीयसी से प्रश्न छायावाद के सम्बन्ध में किया तो प्रश्न का सटीक उत्तर उन्होंने निम्न प्रकार से दिया। देखिए प्रश्नोत्तर –

प्रश्न **अच्छा यह बताइए कि याछावाद में भी जो चार प्रमुख नाम लिए जाते हैं, जिसमें एक आपका है, सभी के काव्य में कहीं–न–कहीं प्रकृति तो आती है; लेकिन सबका प्रकृति के साथ संबंध बिलकुल अलग प्रकार का है। पंत के लिए प्रकृति और चीज है, निराला के लिए और है, आपके लिए और है, या कि वास्तव में है या नहीं ? प्रकृति को आप क्या स्थान देती हैं, अपने काव्य में ?**

उत्तर प्रकृति हमारे यानी मेरे पास, मैं समझती हूँ, प्रकृति के रूप में नहीं आती हमेशा रूपक के रूप में आती रही है। जैसे ऋग्वेद का कवि उषा को कभी उषा की तरह नहीं चित्रित करता, मरुत को कभी मरुत की तरह नहीं करता। यह रूपक की प्रकृति एक व्यक्तित्व देने की प्रक्रिया है, और व्यक्ति ऐसा बना करके हम उसके निकट जाते हैं, इसे अच्छी तरह देख पाते हैं। कुछ इतने अच्छे वरुण

के सूक्त हैं। मरुत के सूक्त हैं; ये सब रूप कही हैं। संभव है मेरे मन में भी इसका प्रभाव पड़ा होगा। हमारे दर्शन में जो है वही छायावादियों ने लिखा है।

महीयसी महादेवी जी ने अपनी लेखनी मीरा के सदृश्य उस समय उठायी जब देश में पर्दा प्रथा थी और नारियों को पुरुषों के साथ बैठना अपमानजनक माना जाता था। ऐसी मनीषा ने सारे सामाजिक बन्धनों को तोड़कर काव्य रस सिद्धि हेतु प्रतिज्ञा किया और काव्य को अंगीकार किया। अपनी अविरल लेखनी से उन्होंने अनेक ग्रंथों की रचना की।[1]

शचीरानी गुर्टू के द्वारा जैनेन्द्र जी का साक्षात्कार (महादेवी जी के संदर्भ में)

महादेवी जी की कविता का धरातल बौद्धिक है। कहें बौद्धि सहानुभूति। उनके काव्य में भाव की उतनी कच्ची भूमिका नहीं है। उससे अधिक तल्लीनता है, पर जैसा कि मैंने माना है कविता में उनकी निजता डूबती नहीं है, बुद्धि की डोर से वह जैसे अलग थमी रहती है।

घायल घाव नहीं चाहता। जो अभी घाव ही चाहता है, मालूम होता है उसकी गति घायल की है नहीं। महादेवी जी विरह और वियोग में रस अधिक ढूँढ़ती हैं, इसका अर्थ है विकलता उतनी अनुभव नहीं करतीं।

बुद्धि जानती है, इसी कारण वेदना में घुलने नहीं देती यानी वह भक्ति से भिन्न है। भक्ति में एक विह्वलता है, महादेवी के काव्य में इतनी अधिक कविता है कि उसीके कारण हम जान लेते हैं कि विह्वलता नहीं है। विह्वलता में भाषा के किनारे टूटे-फूटे बिना नहीं रह सकते, जबकि महादेवी जी की कविता सुसज्जित भाषा का अनुपम उदाहरण है। वेदना वह जो बुद्धि को भिगो दे। बुद्धि अलग से जिसे थामे रह सकती है, वह पीड़ा शायद बुद्धिगत है, प्राणगत नहीं; जबकि वेदना का मूल प्राण में है।

प्रश्न **सुना है महादेवी जी नब्बे प्रतिशत हँसती हैं, बातें कम करती हैं।**

उत्तर बात तो कम नहीं करतीं, पर हँसी के पक्ष में अधिक हो सकता है। यह भी कहा जा सकता है कि वह हँसी सर्वथा बात में से निकली हुई नहीं होती। कुछ असम्बद्ध भी होती है।

प्रश्न **क्या उनकी हँसी असम्बद्ध से अस्वाभाविक भी हो जाती है?**

उत्तर अस्वाभाविक महादेवी जी की ओर से नहीं कहा जा सकता। चर्चा के प्रसंग की ओर से भले ही अस्वाभाविक कह लिया जाय।

प्रश्न **महादेवी जी की हँसी में मनोवैज्ञानिक तथ्य क्या है?**

उत्तर मुझे लगता है, महादेवी जी अपने और दूसरे के बीच अन्तर बनाए रखना चाहती

हैं। उसको सहज, फिर भी अनिवार्य बनाए रखने के लिए, बीच में यह हँसी डाल देने का उपाय है। इस तरह वे स्वयं किञ्चित दुर्ज्ञेय बनती हैं।

प्रश्न **हँसी का तरीका उन्होंने क्यों अख्तियार किया, उन्हें दुर्ज्ञेय बनने की प्रेरणा कैसे और क्यों होती है ?**

उत्तर आपके प्रश्नों का पूरा उत्तर मुझसे कैसे मिल सकता है। दुर्ज्ञेश बनने की आवश्यकता स्वयं दुर्ज्ञेय नहीं होनी चाहिए। अपने को न खोलने की इच्छा हम सभी में है। एक स्त्री में सहज भाव से वह अधिक हो सकती है, कवयित्री में और भी अधिक; किन्तु महादेवी जी व्यवहार में शिष्ट सहानुभूति से दूर नहीं जा सकतीं। दूसरा उनकी जगह होता तो अपने को गुम-सुम या गरिमामय बनाकर सुरक्षित कर लेता। महादेवी जी का शिष्टाचार उन्हें ऐसा नहीं करने दे सकता, वह उन्हें हार्दिक दिखलाना चाहता है। वह हार्दिकता उतनी सहज उनके लिए नहीं है। कारण वे पारदर्शी सन्त प्रकृति की नहीं है। ऐसी हालत में खिलखिलाहट से भरी हँसी ही आवरण का एकमात्र उपाय रह जाता है। लगता है, इस हँसी में खुल रही है, इस हँसी में वह खुल रही हैं, पर वही उनको ढक रही होती है।

प्रश्न **महादेवी जी से आप सर्वप्रथम कब मिले थे?**

उत्तर ठीक तिथि याद नहीं है, लेकिन पहली बार जब मिलना हुआ उसको अब से बीस वर्ष होते होंगे।

प्रश्न **परस्पर में क्या-क्या बातें हुईं ? यदि कुछ याद हो तो बताने की कृपा करें।**

उत्तर बातें पूरी तो याद नहीं हैं। वे इलाहाबाद शहर में तब किसी कन्याशाला में थीं, उनकी कविता ने नया-नया लोगों का ध्यान खींचा था। मुझे याद है कि पाठशाला के बन्द दरवाजे पर मुझे कुछ देर रुकना पड़ा था। फिर कुछ देर अन्दर प्रतीक्षा में बैठना पड़ा। मालूम हुआ कि खबर दी गई है, नहा रही है, 'अभी' आ रही है। वह अभी मुझे कुछ समय अभी नहीं मालूम हुआ। काफी देर में वे आईं। जान पड़ता है वह देर मुझे रुचिकर न हुई थी। और आते ही इसी की झल्लाहट मैंने उन पर उतारी। कहने की आवश्यकता नहीं कि वह भी झल्लाहट के रूप में नहीं उतरी। मैंने कहा था कि देखिए, पहले आपने यह ग़लती की कि कविता लिखी, फिर यह कि छपने दी, जिस पर सबसे बड़ी ग़लती यह कि वह कविता अच्छी लिखी। किसी ने आपसे यह नहीं कहा था कि आप एक पर एक ये ग़लतियाँ करती चली जाएँ। यह आपका अपना काम

था। कोई भी आपके साथ इसके दोष को बँटा नहीं सकता। अब अपने कर्मफल से आप बच नहीं सकतीं। यानी अपनी कविता से आपने ध्यान खींचा है तो आप अपने को उस ध्यान से बचाने की अपात्र हो गईं। बात इसी ढंग से शुरू होकर न जाने कहाँ-कहाँ घूमती-फिरती रही। जान पड़ता है उनका असमंजस और मेरा क्षोभ अधिक देर हमारे बीच ठहरा नहीं। यही साहित्य-वाहित्य की कुछ गप-शप होती रही होगी।

जी, आप पूछना चाहती हैं कि वे हँसी थीं और कितनी बार हँसी थीं। नहीं, उस समय एक बार भी उनके हँसने का स्मरण नहीं है। तब वे गुरुजी थीं भी तो नहीं। शायद विद्यार्थिनी थीं और एम.ए. आरम्भ नहीं तो बी.ए. अंतिम की परीक्षा दे रही थीं।

प्रश्न **आप अभी हाल में भी महादेवी जी से मिले होंगे, तब के और अब के उनके व्यक्तित्व में क्या अन्तर पड़ा है?**

उत्तर हाँ ! मिला हूँ और मिलता ही रहता हूँ, अन्तर वही ठीक बीस वर्ष जितना पड़ा है। तब सलज्ज्ञा थीं, अब बात-चीत में दूसरे को लज्जित करती हैं। जीवन में तब प्रवेश कर रही थीं, और कहाँ उनका स्थान है और होगा, इसके बारे में हर धारणा से रीती और हर आशा से भरी थीं। अब सब घटित घटना है। न धारणा के लिए और न आशा ही के लिए स्थान है। इसलिए व्यवहार में अबोधता नहीं रह गई है। सिद्ध दक्षता आ गई है। इत्यादि इत्यादि कितना मुझसे कहलाइयेगा, खिलती वय से आरम्भ होकर उसके अन्तर बीस वर्ष का अन्तर अपने आप में समझ लेने की बात है।

प्रश्न **महादेवी जी की कविता का धरातल क्या है?**

उत्तर देखिए, मैं अकवि हूँ, उनकी कविता का धरातल शायद बौद्धिक है या कहें बौद्धिक सहानुभूति है। शायद वह अनुभूति से किंचित् भिन्न वस्तु है।

प्रश्न **महादेवी जी को कविता की प्रेरणा कहाँ से प्राप्त हुई?**

उत्तर यह प्रश्न महादेवी जी से करने योग्य है।

प्रश्न **मेरे पूछने का तात्पर्य यह है कि महादेवी जी को कविता की प्रेरणा उनके जीवन की बाह्य-परिस्थितियों के कारण है अथवा उनकी प्रेरणा भीतरी साधना में निहित है?**

उत्तर बाहर की परिस्थिति और भीतर की साधना मेरे लिए ये दो अलग निरपेक्ष तत्व नहीं है। भीतर-बाहर में क्रिया-प्रतिक्रिया चलती ही रहती है। इस तरह मैं

उनकी या किसी की कृतित्व–प्रेरणा को किसी खास खाने में बिठाकर नहीं देख सकता।

प्रश्न **महादेवी जी गृहिणी या माता होतीं तो क्या उनकी कविता का रूप यही होता?**

उत्तर नहीं ! यह नहीं होता, तब वह कविता न इतनी सूक्ष्म होती, न जटिल, न न गूढ़। तब वह अधिक प्रकृत होती।

प्रश्न **महादेवी जी में भ्रान्ति, जड़ता, मूक प्रणयानुभूति अधिक है। वेदना है, किन्तु उसमें वे घुलती नहीं है ; वरन् वे सुख का अनुभव करती हैं, ऐसा क्यों है?**

उत्तर प्रश्न में शब्द बड़े हैं। उनमें से मुझे राह–बूझ नहीं मिलती। वेदना वाली बात समझ में आती है। वेदना में घुलना या न घुलना मेरे विचार में यह आदमी के अपने निर्णय की बात नहीं है। यदि कोई नहीं घुलता, तो कहना यह होगा कि वेदना की मात्रा पर्याप्त से कम है। महादेवी जी वेदना में घुल गई हैं ऐसा मैं भी नहीं मान पाता। इसी से मुझे मानना होता है कि वेदना वह समग्र नहीं, किंचित् बौद्धिक है। आपके पहले प्रश्न के उत्तर में जो मैंने कहा था, कि मेरी दृष्टि में उनके काव्य का धरातल बौद्धिक है या बौद्धिक सहानुभूति है तो इसका यही मतलब था। बुद्धि जानती है, इस कारण घुलने नहीं देती यानी वह भक्ति से भिन्न है। भक्ति में विह्लता है, महादेवी के काव्य में इतनी अधिक कविता है कि इसी के कारण हम जान लेते हैं कि विह्लता नहीं है। विह्लता में भाषा के किनारे टूटे–फूटे बिना नहीं रह सकते, जबकि महादेवी जी की कविता सुसज्जित भाषा का अनुपम उदाहरण है। इसमें मैं वेदना की कुछ कमी ही को कारण देखता हूँ। वेदना वह जो बुद्धि को भिगो दे। बुद्धि अलग से जिसे थामे रह सकती है, वह पीड़ा शायद बुद्धिगत है, प्राणगत नहीं है, जबकि वेदना का मूल प्राण में है।

प्रश्न **She is pathetic, not tragic. क्या आप महादेवी जी के सम्बन्ध में इस धारणा से सहमत हैं?**

उत्तर इन दो शब्दों में contrast तीव्र है ! Tragic गुण तो महादेवी के काव्य में मुझे कम ही मिलता है, पर pathetic उसे कह देकर भी मुझे छुट्टी नहीं मिलती। Pathetic विशेषण के नीचे भाव की मानों बहुत कच्ची धरती माननी होगी। उस काव्य में भाव की उतनी कच्ची भूमिका नहीं है। उससे अधिक तल्लीनता है, पर जैसा कि मैंने माना है कविता में उनकी निजता डूबती नहीं है, बुद्धि की

डोर से वह जैसे अलग थमी रहती है। इसी से ट्रेजिक Tragic भाव उत्पन्न होने से वहाँ कुछ बच ही जाता है।

प्रश्न **महादेवी जी और मीरा की पीड़ा में क्या अन्तर है ?**

उत्तर उत्तर मुझे अनुमान से ही देना होगा। अनुमान खतरनाक भी होता है। महादेवी जी मेरे लिए समकालीन हैं, मीरा ऐतिहासिक। पर जहाँ तक संभव है, मैं व्यक्तियों पर से अनुमान नहीं लगाता। अनुमान काव्य से लगता है। महादेवी जी की पीड़ा चाह कर अपनाई हुई है, मीरा की अनिवार्य। मीरा अपने में बेबस और अपनी पीड़ा से छुटकारा पाने के लिए विकल हैं। वे प्यासी हैं इसलिए उनमें पानी की पुकार है। महादेवी प्यास को ही चाहती मालूम होती हैं, इससे अनुमान होता है कि प्यास को उन्होंने जाना नहीं है। घायल घाव नहीं चाहता। जो अभी घाव ही चाहता है, मालूम होता है उसकी गति घायल की है नहीं। महादेवी जी विरह और वियोग में रस अधिक ढूँढ़ती हैं। इसका अर्थ है, विकलता उतनी अनुभव नहीं करती। मीरा तो अपने गिरिधर गोपाल के पीछे सारी लाज लुटा बैठी हैं। महादेवी के लिए सामाजिक सम्भ्रान्तता उतनी नगण्य वस्तु नहीं है। कोई गिरिधारी उनके लिए इतना मूर्त्त और वास्तव नहीं बन सकता, जो उन्हें उधर से असावधान कर दे। यानी अपने इष्ट को वह विचार-रूप में ही ग्रहण कर सकती हैं, प्रत्यक्ष रूप में नहीं चाह सकतीं। प्रत्यक्ष होकर उसे शरीर तक मिलने की दुःसंभावना हो आती। महिला-जनोचित उनके स्वभाव के लिए वह सर्वथा असह्य है। इस तरह मीरा और महादेवी की पीड़ा में मैं किसी प्रकार भी समकक्षता नहीं देख पाता हूँ।

प्रश्न **महादेवी के काव्य में प्रणयानुभूति के अतिरिक्त सत्य, सुन्दर कहाँ तक साध्य और साधन हैं?**

उत्तर मैं प्रश्न को ठीक तरह हृदयङ्गम नहीं कर पाया। मेरे लिए तो प्रत्येक सम्बन्ध सघन होकर प्रणय बन जाता है। मूर्त्त के लिए ही नहीं अमूर्त्त के प्रति भी प्रणय होता है। प्रणय अपनी प्रकृति से मूर्त्त को अमूर्त्त और अमूर्त्त को मूर्त्त बना देता है। अर्थात् प्रणयानुभूति से अतिरिक्त काव्य में कुछ और होने का अवकाश ही कहाँ है ? पर हाँ, महादेवी के काव्य में वैसा अवकाश रहा है, क्योंकि बुद्धि वहाँ डूबी नहीं है, भीगी नहीं है। किंचित् स्वस्थ और सुरक्षित रह गई है। मीरा से पूछने चलो तो गिरिधारी से अलग कोई सत्य और सुन्दर उसके लिए जँचता ही नहीं। जिसके प्रति प्रणयानुभूति एवं प्रणय निवेदन हो, उससे अतिरिक्त सत्य और सुन्दर को होने के लिए अधिष्ठान ही कहाँ है? यदि है तो मानूँगा कि काव्य

की त्रुटि है। इसी अर्थ में मैंने कहा कि आपके प्रश्न को मैं पूरी तरह हृदयंगम नहीं कर पाया।

प्रश्न **महादेवी जी काव्य को किन अर्थों में लेती है, ''कला के लिए कला का सिद्धान्त'' उनके काव्य पर कहाँ तक लागू होता है?**

उत्तर प्रश्न के पहले भाग का उत्तर महादेवीजी से लीजिए। ''कला कला के लिए'' यह सूत्र महादेवी के काव्य से कितनी तृप्ति पाता है यह भी उस सूत्र के सूत्रधार से मालूम करने की बात है। मैं समझता हूँ माने जाने वाले लौकिक उद्देश्यों में से किसी के साथ उस कविता को जड़ित कठिनाई से ही देखा जा सकेगा। निरुद्देश्य तो उसे या किसी को कैसे कहा जा सकता है। पर क्योंकि हम किसी स्थूल और स्पष्ट लौकिक हेतु से उसे नहीं जोड़ सकते, इसलिए उस काव्य-कला को कला के लिए ही श्रेष्ठ माना जाय तो कुछ अन्यथा न होगा।

प्रश्न **पद्य में वे अपने आप में सिमटी हैं, किन्तु गद्य उनकी सहानुभूति को कहाँ तक बिखेरता है?**

उत्तर आपकी बात में कुछ ऐसा आशय तो है, जिससे मैं सहमत हो सकता हूँ। पद्य में जैसे उन्होंने अपने को टटोला है, और अन्त में अपने को निवेदित किया है, उसके प्रति जो उनके अपने आत्म से भिन्न नहीं है। इस तरह घूम-फिरकर उनका पद्य अधिकांश उन तक ही लौट आता है। उसमें जगत नहीं है, मेरे ख्याल से जगत-पिता भी नहीं है। इसलिए वह काव्य कुछ इतना वायव्य और सूक्ष्म है कि अनुभूति तक में मुश्किल से आता है। यह सुविधा गद्य में तो है नहीं। गद्य इतना पर निरपेक्ष हो सकता ही नहीं है। इसलिए उनके गद्य सहज भाव से हम, तुम की चर्चा हुई है। उनमें मानव-पात्र हैं और वास्तव परिस्थितियाँ हैं। केवल आत्म ही आत्म वहाँ नहीं है।

सहानुभूति की गति आवश्यक रूप से अपने से इतर के प्रति है। महादेवी जी के पद्य में वह इतर लगभग लुप्त है। इससे यह कहना कुछ हद तक ठीक ही है कि गद्य में इनकी सहानुभूति अपेक्षाकृत अधिक खिली है।

प्रश्न **महादेवी के रेखा-चित्रों के सम्बन्ध में आपकी क्या धारणा है?**

उत्तर रेखा-चित्र से मतलब शायद आपका उन शब्द-चित्रों से है जो उनकी पुस्तक 'अतीत के चलचित्र' और 'स्मृति की रेखाएँ' में मिलते हैं। मेरे ख्याल में वे शब्द-चित्र सुन्दर बन पड़े हैं और हममें सहानुभूति-परक स्पन्दन जगाते हैं। यह कि वे महिम्न माने जाने वाले नायक-नायिकाओं के कल्पना-चित्र नहीं हैं, एक अच्छी ही बात है। साहित्य ने असाधारण को पर्याप्त से अधिक महत्व दिया

है। असाधारण किंचित् अपसाधारण भी होता है। समय है कि हम साधारण के महत्व को पहिचानें। एक समय किसी साहित्य-चर्चा में अमुक साहित्य-पंडित से 'साधारणीकरण' शब्द सुना था। उसका शास्त्रीय अर्थ मैं नहीं जानता, लेकिन इस अर्थ में 'साधारणीकरण' मुझे प्रिय और मान्य होता कि प्रत्येक निजता को हम इस रूप में लें और दें कि सार्वजनिक से विषम न रह जाय। महादेवी जी को इसके लिए यानी उनके रेखाचित्रों के लिए मैं बधाई दे सकता हूँ। इसका मतलब यह कि मैं उनके प्रति उस सृष्टि के लिए कृतज्ञ हूँ।

प्रश्न **महादेवी जी की चित्रकला में विरहिणी नारियों के ही धुँधले चित्र मिलते हैं, ऐसा उनसे जान में हुआ है या अनजाने में ?**

उत्तर जान-अनजान दोनों में।

प्रश्न **महादेवी जी की चित्रकला के सम्बन्ध में आपके क्या विचार हैं?**

उत्तर महादेवी जी की रचनाओं में मैंने उनके बनाए चित्र देखे थे। पर उन्होंने जो अपने कमरे की भीतों पर चित्र काढ़े हुए थे, उनका मुझ पर अधिक प्रभाव पड़ा। पहली बार वहाँ जाने पर मैं उन भीत-चित्रों को मुग्ध-सा देखता रह गया। काव्य-पुस्तकों में अंकित या स्वतंत्र-चित्र भावों को मूर्त करने के प्रयत्न से बने हैं। जीवन-प्रसङ्ग से वे इतने जुड़े नहीं हैं। इससे वे पूरी तरह अनुभूति की पकड़ में नहीं बैठते। यों तो अज्ञेयता भी एक प्रकार का रस है। पर उसकी बात यहाँ नहीं करूँगा। हम गर्व में रहते हैं, इससे जब हमारी बुद्धि कहीं अकृत-कार्य होती है तो किञ्चित अच्छा भी लगता है। वैसी दुर्बोधता उन चित्रों में है, पर मुझ जैसे को कुछ देते नहीं जान पड़े। कमरे की भीतों पर जो चित्र थे, वे उस प्रकार भाव-कैवल्य में से नहीं बने थे। उन्हें घटनात्मक भी कहा जा सकता है। जीवन-प्रसंग से उनका सीधा सम्बन्ध था। शायद इसीलिए रेखाङ्कन आदि की अपनी संभव त्रुटियों के बावजूद मुझे विभोर कर सके। मानना होगा कि महादेवी जी की चित्रकला जीवन से अधिक चिन्तन की ओर उन्मुख है। जीवन तो माँसलता माँगता है। उसके बिना वह चलता नहीं। पर चिन्तन के लिए शरीर ही बाधा है, इसलिए अशरीरी चित्रण चिन्तनाभिमुखता के लिए अधिक अनुकूल पड़ सकता है। इसको फिर चाहे उसकी विशेषता कहा जाय चाहे मर्यादा।

प्रश्न **क्या आप के मन्तव्य से इस वस्तु-स्थिति पर भी प्रकाश पड़ता है कि उनके चित्रों में विरहिणी नारी का चित्रण विशेष है?**

उत्तर हाँ ! अपने निज के भाव पर आश्रित रहने के कारण और बाहर के घटना-

जगत से विमुख होने के कारण उनके चित्रों में एकाकिनी–नारी का स्थान पाना सहज संभव ही है। उस एकाकिनी को निश्चय ही अनेक भावों और रूपों में आना होगा। परस्परता के बीच उसकी एकान्तता एवं अभावात्मकता उस तरह निभ नहीं सकेगी। इसलिए उन चित्रों में उस प्रकार की सामाजिक परस्परता का अभाव स्वाभाविक मानना चाहिए।

प्रश्न **महादेवी के काव्य पर बुद्ध, रवीन्द्र, अरविन्द का प्रभाव कहाँ तक है?**

उत्तर उस 'तक' के अनुपात का मुझे कुछ पता नहीं है। प्रश्न में आए तीनों व्यक्ति रहस्यवादी या आध्यात्मिक माने जाते हैं। आध्यात्मिक पर प्रभाव को उस रूप में ले सकता ही नहीं है। उसे नितान्त मौलिक होना होता है। मौलिक से मतलब हर प्रभाव उसकी आत्मता में घुल कर ही उसे अंगीकृत हो जाता है। इस तरह कह सकते हैं कि परत्व को स्वत्व भाव से ही वह ले पाता है। महादेवी जी के सम्बन्ध में अनुपात का यद्यपि मुझे पता नहीं है तो भी यह इनकार करते नहीं बनता कि रवीन्द्र, बुद्ध आदि का उनपर प्रभाव है। प्रभाव है यह कहते बनता है, इसी में आशय है कि वह प्रभाव कुछ अलग से भी झलक आता है। स्वत्व में वह एकदम खो नहीं गया है। क्या मैं कहूँ कि अपने को जो पूरी तरह स्वीकार करने का आभास उनकी रचनाओं में नहीं है, वह बहुत कुछ 'पर' को अपनाए रहने के कारण भी है।

प्रश्न **महादेवी और जैनेन्द्र के साहित्य में किसकी कृतियाँ अधिक स्थायी रहेंगी?**

उत्तर जैनेन्द्र की तो चिर–चिरान्त स्थायी रहने वाली हैं। उसका अभिमान इससे कम मानने को क्यों तैयार हो। महादेवी जी की रचनाओं की जन्म–पत्री को भृगु–संहिता से मिलाकर देख लेना चाहिए, तब ठीक–ठीक उनकी आयु के वर्ष, पल, छिन का पता लग सकेगा।

प्रश्न **आपके उत्तर में तो उपहास है। क्या प्रश्न को आप उपहास के ही योग्य समझते हैं?**

उत्तर और नहीं तो क्या ! आप ही कहिए प्रश्न में से विनोद के सिवा और क्या आशय लिया जा सकता है।

प्रश्न **तो क्या आप कविता को इतना अस्थायी मानते हैं कि वह कुछ क्षणों या पलों में ही सीमित है?**

उत्तर नहीं, लेकिन उसकी आयु का निर्धारण कैसे हो? हमसे जुड़ा हुआ सब कुछ 'अहम्' से भी जुड़ा है। अहं तो नाशवान है। इससे आगे–पीछे हमारी रचनाओं को भी नाश को प्राप्त होना है। काल तो अनन्त है, जिसको हम चिरस्थायित्व

कहें उसकी क्या उस अनन्तता में बूँद जितनी भी गिनती है! महादेवी की कविता मर्म को छूती है। मर्म सबका एक है। उसीको आत्मा कहें। अपने शुद्ध रूप में वही परमात्मा है। उस अवस्था में वह कालावधित सत्य है। उसके नाश का प्रश्न ही नहीं। अतः यत्र–तत्र मार्मिक भी हो जाने के कारण केवल सामायिक भाव से जीकर समाप्त हो जाने वाली कविता वह नहीं है।[2]

संदर्भ सूची

1. महीयसी महादेवी : जो स्वयं रागिनी बन गई पन्ना लाल गुप्त 'मानस', मैत्रेयी कलश त्रैमासिक पत्रिका, सितम्बर 1988 महादेवी विशेषांक, सम्पादक पद्युम्ननाथ तिवारी 'करुणेश', प्रकाशक : महादेवी काव्य अनुशीलन संस्थान पृष्ठ 129 से 130
2. प्रश्नोत्तर – जैनेन्द्र कुमार, शचीरानी गुर्टू, पुस्तक : महादेवी वर्मा काव्य–कला और जीवन–दर्शन, सम्पादिका शचीरानी गुर्टू , प्रकाशक : रामलालपुरी आत्माराम एण्ड सन्स पृष्ठ 1 से 9